हिंदी कविता

आधी शताब्दी

अजय तिवारी

हिंदी कविता : आधी शताब्दी

अजय तिवारी

अजय तिवारी

जन्म - 06 मई 1955, इलाहाबाद।

पैतृक निवास - जगजीवन पट्टी, घनश्यामपुर, जौनपुर

शिक्षा - 1970 में इलाहाबाद से हाईस्कूल, दिल्ली विश्वविद्यालय से एम.ए. (हिंदी) पी.एच.डी.।

प्रकाशित पुस्तकें - प्रगतिशील कविता के सौंदर्य मूल्य, नागार्जुन की कविता, कुलीनतावाद और समकालीन कविता, साहित्य का वर्तमान, पश्चिम का काव्य विचार, आलोचना और संस्कृति, राजनीति और संस्कृति-व्यवस्था का आत्म संघर्ष, आधुनिकता पर पुनर्विचार: शिल्प और समाज।

सम्पादन - कवि मित्रों से दूर (केदारनाथ अग्रवाल के संवाद) केदारनाथ अग्रवाल, आज के सवाल और मार्क्सवाद (रामविलास शर्मा के संवाद), तुलसीदास: पुनर्मूल्याकंन, रामविलास शर्मा: निबंध (नेशनल बुक ट्रस्ट)।

प्रकाश्य- केदारनाथ अग्रवाल (साहित्य अकादमी), जनवाद की समस्या और साहित्य, उत्तरआधुनिकता, कुलीनतावाद और समकालीन कविता, निराला: अनुभव और रूपगठन।

सम्मान - केशव स्मृति सम्मान (भिलाई), देवीशंकर अवस्थी सम्मान (दिल्ली), भगवत शरण उपाध्याय सम्मान (बलिया)।

अजय तिवारी की आलोचना दृष्टि बहुत गहरे रूप में वैचारिक है। प्रस्तुत पुस्तक में बीसवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध के साहित्यिक बदलावों को समझने के लिए वे अपने आपको केवल साहित्यिक परिदृश्य तक सीमित नहीं रखते। इस साहित्यिक परिदृश्य की निर्मिति के लिए जिम्मेदार सांस्थानिक-राजनैतिक शक्तियों तक वे पहुँचते हैं। ये शक्तियाँ हिंदी कविता को क्या रूप दे रही हैं इसकी पड़ताल अजय तिवारी करते हैं।

विगत शताब्दी के सर्वाधिक राजनीतिक कवि मुक्तिबोध के काव्य वक्तव्य मात्र सपाटबयानी न होकर गहरे आवेग से संपृक्त आंतरिक विवशता के बयान होते थे। वैसे ही राजनीति प्रेरित समय की कविता की आलोचना मात्र विश्लेषण नहीं हो सकती। उसे अनिवार्यत: विचार-विवादात्मक होना होगा। आवेगधर्मी होना होगा। राजनीतिक होना होगा। और होना होगा सच्चे अर्थों में मानवीय। अजय तिवारी का आलोचना- कर्म इन सभी शर्तों को पूरा करता है। इसलिए प्रस्तुत पुस्तक में वे आधी शताब्दी की हिंदी कविता की पहचान सही मायनों में कर पाए हैं।

एक तरफ वे नयी कविता की सीमा बताते हैं-तो दूसरी तरफ समकालीन कविता की शक्ति को रेखांकित करते हैं। समकालीन कविता का विचार और स्थापत्य दोनों उनकी चिंता के विषय हैं। इन्द्रिय-बोध और भाव के साथ विचार के संतुलन को अजय तिवारी अच्छी कविता का लक्षण मानते हैं। समसामयिक जीवन पर पड़ने वाले वैश्विक दबावों के प्रति संवेदनशील- जीवनोत्सुख कविता के वे पक्षधर हैं। प्रतिरोध की कविता की हिमायत उनके आलोचक का स्वभाव है।

शायद इसीलिए वे न केवल नागार्जुन और धूमिल की दृष्टि का फर्क पहचान पाए हैं बल्कि नागार्जुन, केदार और त्रिलोचन की परंपरा में समकालीन कवियों की प्रगतिशील चेतना पर दृष्टि केंद्रित कर पाए हैं।

दरअसल इस पुस्तक में लेख भले ही अलग-अलग कवियों पर लिखे गए हैं-लेकिन इनके भीतर एक वैचारिक अंत-भूनता है। ये लेख आधी शताब्दी की कविता (चुनिंदा) का ही क्रिटीक तैयार नहीं करते बल्कि समय-समाज और राजनीति के राष्ट्रीय-वैश्विक संदर्भों का भी क्रिटीक बनाते चलते हैं। यह पुस्तक कवियों और पाठकों दोनों के लिए जरूरी सिद्ध होगी।

- नीरज कुमार

भूमिका

स्वागत का विषय है कि अनेक प्रकाशक पाठकों के प्रति जागरुकता प्रदर्शित कर रहे हैं। पुस्तकालयों की खरीद पर टिके बाजार में पहुँच से बाहर जाती हुई क़ीमतों के कारण व्यक्तिगत ग्राहक जहाँ सिर्फ मूक-मूल्य दर्शक बन गया है कुछ प्रकाशकों ने पुस्तकों को उसकी पहुँच में लाने का इरादा किया, यह शुभ-संकेत है। पुराने पीपुल्स पब्लिशिंग हाउस, नयी दिल्ली से लेकर बोधि प्रकाशन, जयपुर तक बहुत-से मंच इस दिशा में सक्रिय हैं। वे पाठकों से अग्रिम राशि लेकर उन्हें पुरानी पुस्तकें सस्ते दाम पर उपलब्ध करायें, ऐसा नहीं है। इस बारे में सबसे उल्लेखनीय कार्य संवाद प्रकाशन, मेरठ ने किया है। उसके स्वामी आलोक श्रीवास्तव बेहद सुरुचिपूर्ण और प्रबुद्ध व्यक्ति हैं। उन्होंने दुनिया की कीर्तिमान रचनाएँ बेहतरीन अनुवाद में पाठकों को उपलब्ध करायी हैं।

ये सभी प्रकाशक आज के ही बाजार में काम कर रहे हैं। हो सकता है प्रकाशन व्यवसाय में एकाधिकारवाद से निबटने का यह एक कारगर तरीका हो। बड़ी पूँजी का सामना पाठक के बल पर ही किया जा सकता हे।

साहित्य भंडार, इलाहाबाद के स्वामी हमारे आत्मीय श्री सतीश अग्रवाल भी इस दिशा में सक्रिय हुए हैं। अग्रज डॉ. अशोक त्रिपाठी ने आदेश किया कि हिंदी कविता पर उनके लिए एक पुस्तक देनी है। मेरे लिए विकल्प ही नहीं था। इलाहाबाद से अपने जन्मजात संबंध के नाते मेरे लिए यह प्रसन्नता का विषय था। सतीश जी आम पाठक की पहुँच लायक पुस्तकों की पहली खेप में हिंदी की कविता पर आलोचना प्रकाशित करना चाहते हैं यह विशेष स्वागत योग्य बात थी। अपने आत्मीय डॉ. नीरज कुमार (जामिया मिलिया) के परामर्श से जब लेखों का चुनाव शुरू किया तो काफी धर्मसंकट से गुजरना पड़ा। यह एक भिन्न अर्थ में पुस्तक की विषय-वस्तु पर व्यवसाय का दबाव था। कीमत तय थी, पचास रुपये; उसके अनुसार कलेवर भी एक हद तक तय था। फिर भी, यह अनुशासन दूसरे अर्थ में उचित सिद्ध हुआ। पहले सोचा गया कि समकालीन कविता की पृष्ठभूमि के रूप में प्रगतिशील कवियों पर कुछ सामग्री जानी चाहिए साथ ही गीत सजल और दलित कविता पर भी थोड़ी सामग्री रहनी चाहिए। लेकिन इतनी सामग्री के साथ पुस्तक अपनी निर्धारित सीमा से ज्यादा बढ़ रही थी। अंतत: उस सारी सामग्री को भविष्य के लिए स्थगित करके समकालीन कविता की कुछ सामान्य समस्याओं और कुछ चुने हुए

कवियों से संबंधित सामग्री इस योजना में शामिल की गयी। नागार्जुन और धूमिल की तुलना करते हुए एक लेख देना जरूरी था ताकि समकालीन कविता में निहित वैचारिक परिप्रेक्ष्य का और उसमें इन पंक्तियों के लेखक के दृष्टिकोण का स्पष्टीकरण हो सके।

स्वभावत: यहाँ न सभी समस्याओं और प्रवृत्तियों का विवेचन है, न सभी महत्वपूर्ण कवियों का मूल्यांकन। बल्कि कहिए, मेरे सभी प्रिय कवियों का भी विवेचन नहीं है। लेकिन हिंदी पाठक को पिछली आधी शताब्दी की कविता का, उसमें व्यक्त संघर्षों का और उसकी पृष्ठभूमि में उपस्थित सामाजिक संदर्भों का थोड़ा-बहुत परिचय मिल जाय तो यह प्रयत्न सार्थक होगा। सरसरी नजर से भी देखें तो स्पष्ट होता है कि अधिकांश कवियों में जीवन के अंतर्द्वन्द्व को खोजने की बेचैनी मौजूद है। वे अपने-अपने ढंग से आपातकाल के बाद के भारतीय समाज को, उसकी टकराहटों को परखने की कोशिश कर रहे हैं।

यह बात जोर देकर कहने की है कि जिसे कुलीनतावादी कविता कहा जाता है, उसमें यह प्रयत्न इतनी गहराई से व्यक्त नहीं होता। शायद यही कारण है कि आज, तीस-पैंतीस साल बीतते-बीतते कुलीनतावादी काव्यधारा क्षीण हो गयी है हालांकि राष्ट्रीय और वैश्विक स्तर पर पूँजी की सत्ता पहले से ज्यादा सुदृढ़ हुई है।

इससे यह संकेत मिलता है कि हिंदी कविता अपनी सारी दिशाहीनता के बावजूद पूँजी के महावृत्तांत से टकराने का, या कम से कम उसके बाहर रहने का, प्रयत्न कर रही है। उसकी सार्थकता का यह सबसे प्रमुख कारण है। जागरूकता का अर्थ राजनीतिक वक्तव्य नहीं है, कलात्मकता का अर्थ यथार्थ से पराङमुखता नहीं है। इस दृष्टि से हिंदी की समकालीन कविता अपनी पूर्ववर्ती परंपरा से सीखकर आगे बड़ी है, उसके इस विकास को पहचानने का एक प्रयास इन निबंधों में है। पाठक को इससे थोड़ी भी वैचारिक सामग्री मिलेगी तो मैं अपना श्रम सार्थक मानूँगा।

अस्तु।

अजय तिवारी

नयी दिल्ली, 14 जून, 2013

विषय-सूची

भूमिका	4
हिंदी कविता : आधी शताब्दी	7
कविता और विचार	22
कविता और स्थापत्य	32
नागार्जुन और धूमिल की काव्य-दृष्टि का फर्क	41
कवि का असंतोष और विकल्प	46
जिंदा लोग ज्यादा इंतजार नहीं करते	49
जीवन का गद्यलोक और कविकर्म	58
प्रकृति और सभ्यता का द्वंद्व	64
तर्कहीनता से लड़ता हुआ स्वप्न	72
अरुण कमल : सही जगह की तलाश	92
निजता में सामाजिकता का रचाव	118
कविता में राजनीति की विद्या	131
लोहा पिघलकर कविता बन गया	143
जैसे बना रहे हों जीवन में थोड़ी-सी जगह	148
सदी का पटाक्षेप और हिंदी कविता	168

उत्तर प्रदेश के सुल्तानपुर जिले में वरिष्ठ कवि मानबहादुर सिंह की हत्या आजाद भारत के पचास वर्षों में विकसित समाज और राजनीति के साथ कविता के संबंध की विडंबनाओं पर एक तीखी टिप्पणी है। स्वाधीनता संघर्ष के दौरान प्रतिबंध और दमन का सामना करते हुए कवियों ने जिस स्वराज्य के सपने देखे थे, उसमें अपराधियों और हत्यारों के लिए वह जगह नहीं थी जो निहित स्वार्थों के विरुद्ध जनता से एक-मेक होकर शब्द के माध्यम से अपनी भूमिका निभाने वाले किसी सफदर हाशमी, किसी अवतार सिंह पाश या किसी मानबहादुर सिंह की जबान 'बंद' करने में सक्षम हो। समकालीन कविता में मानबहादुर सिंह नगरीय या महानगरीय भावबोध के समांतर हिंदुस्तान के किसान की आवाज थे। इसलिए वे गाँव की धूल और जिंदगी की अनगढ़ता के सजीव चित्र तो देते ही थे, राष्ट्रीय हलचलों की धड़कन से भी जुड़े रहते थे। 'कीर्तन-नमाज' में छिपकर हत्या करने वालों का चेहरा वे बेनकाब करते थे। आखिर हत्यारों ने अपना काम कर दिखाया। हम दिल्ली में रहकर विरोध करते हैं और सुरक्षित रहते हैं। मानबहादुर गाँव में रहकर विरोध करते थे, उनकी हत्या हो गई। इसी हिंदुस्तान की राजधानी और दूर-दराज के एक गाँव में जिंदगी की शर्तें कितनी अलग-अलग हैं!

हत्यारे पकड़े नहीं गए। संसद और विधानसभा में रोषपूर्ण निंदा, लेखकों, बुद्धिजीवियों द्वारा मानबहादुर सिंह के गाँव की सद्भावना-यात्रा, उत्तर प्रदेश के मुख्यमंत्री के नाम देश के गृहमंत्री (इंद्रजीत गुप्त) के पत्र के बावजूद हत्यारे छिपे हुए हैं और प्रशासन लाचार है। अपराध-उन्मूलन का हिंसक अभियान चलाने वाली सवर्ण हिंदूवाद और आक्रामक दलितवाद के गठबंध से बनी प्रदेश सरकार की कार्यकुशलता का इससे बड़ा प्रमाण और क्या चाहिए! यह तथ्य और भी दारुण है कि सैकड़ों लोगों के सामने मानबहादुर को फरसे से काटा गया, गोली से मारा गया, लेकिन एक भी आदमी प्रतिरोध के लिए आगे नहीं आया और एक भी आदमी हत्यारे को पहचानने के लिए आगे नहीं आ रहा है।

क्रूरता के जवाब में यह संवेदनहीनता और कायरता कविता के लिए अच्छे समय की सूचना नहीं देती। बहुत से मित्र, कविता और जनता के बीच बढ़ती हुई दूरी के बारे मैं चिंता प्रकट करते हैं। हिंसा और अपराध के